विषय परिचय

वेदना महाधिकारके अन्तर्गत जो वेदनानिक्षेपादि अनुयोगद्वार हैं उनमेंसे आदिके ४ अनुयोगद्वार पुस्तक १० में प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें उनसे आगेके वेदनाक्षेत्रविधान और वेदनकालविधान ये २ अनुयोगद्वार प्रकाशित किये जा रहे हैं।

५ वेदनाक्षेत्रविधान

द्रव्यविधानके समान इस अनुयोगद्वारमें भी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व, य तीन अनुयोगद्वार हैं। यहां प्रारम्भमें श्री वीरसेन स्वामीने क्षेत्रविधानकी सार्थकता प्रगट करते हुए प्रथमतः नाम, स्थापना, द्रव्य व भावके भेदसे क्षेत्रके ४ भेद बतला कर उनमेंसे नोआगम-द्रव्यक्षेत्र (आकाश) को अधिकारप्राप्त बतलाया है। ज्ञानावरणादि आठ कर्मरूप पुद्‌गल द्रव्यका नाम वेदना है। समुद्‌घातादि रूप विविध अवस्थाओंमें संकोच व विस्तारको प्राप्त होनेवाले जीवप्रदेश उक्त वेदनाका क्षेत्र है। प्रकृत अनुयोगद्वारमें चूंकि इसी क्षेत्रकी प्ररूपणा की गयी है, अतएव 'वेदनाक्षेत्रविधान' यह उसका सार्थक नाम है।

(१) **पदमीमांसा**– जिस प्रकार द्रव्यविधान (पु. १०) के अन्तर्गत पदमीमांसा अनुयोगद्वारमें द्रव्यकी अपेक्षा ज्ञानावरणादि कर्मोंकी वेदनाके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य व अजघन्य तथा देशामर्शकभावसे सूचित सादिअनादि पदोंकी प्ररूपणा की गई है, ठीक उसी प्रकारसे यहां इस अनुयोगद्वारमें भी उन्हीं १३ पदोंकी क्षेत्रकी अपेक्षा प्ररूपणा की गई है। उससे यहाँ कोई उल्लेखनीय विशेषता नहीं है (देखिए द्रव्यविधानका विषयपरिचय प्रस्तावना पृ. २–४)।

(२) **स्वामित्व**– अनुयोगद्वारमें उत्कृष्ट पद विषयक स्वामित्व और जघन्य पद विषयक स्वामित्व, इस प्रकार स्वामित्वके २ भेद बतलाकर प्रकरण वश यहाँ जघन्य व उत्कृष्टके विषयमें निश्चित पद्धतिके अनुसार नामादि रूप निक्षेपविधिकी योजना की गई है। इसमें नोआगमद्रव्य-जघन्यके ओघ और आदेशकी अपेक्षा मुख्यतया २ भेद बतलाकर फिर उनमेंसे भी प्रत्येकके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावकी अपेक्षा ४–४ भेद बतलाये हैं। उनमें ओघकी अपेक्षा एक परमाणुको द्रव्य-जघन्य कहा गया है। कर्मक्षेत्रजघन्य और नोकर्मक्षेत्रजघन्यके भेदसे क्षेत्रजघन्य दो प्रकारका है। इनमें सूक्ष्म निगोद जीवकी जघन्य अवगाहनाका नाम कर्मक्षेत्रजघन्य और एक आकाशप्रदेशका नाम नोकर्मक्षेत्रजघन्य बतलाया है। एक समयको कालजघन्य और परमाणुमें रहनेवाले एक स्निग्धत्व आदि गुणको भावजघन्य कहा गया है। आदेशतः तीन प्रदेशवाले स्कन्धकी अपेक्षा दो प्रदेशवाला स्कन्ध द्रव्यजघन्य, तीन आकाशप्रदेशोंमें अधिष्ठित द्रव्यकी अपेक्षा दो आकाशप्रदेशोंमें अधिष्ठित द्रव्य क्षेत्रजघन्य, तीन समय परिणत द्रव्यकी अपेक्षा दो

समय परिणत द्रव्य कालजघन्य, तथा तीन गुण-परिणत द्रव्यकी अपेक्षा दो गुण-परिणत द्रव्य भावजघन्य है। इसी प्रकारसे आदेशकी अपेक्षा इन द्रव्यजघन्यादिके भेदोंकी आगे भी कल्पना करना चाहिये। जैसे– चार प्रदेशवाले स्कन्धकी अपेक्षा तीन प्रदेशवाला तथा पाँच प्रदेशवाले स्कन्धकी अपेक्षा चार प्रदेशवाला स्कन्ध आदेशकी अपेक्षा द्रव्यजघन्य है, इत्यादि। यही प्रक्रिया उत्कृष्टके सम्बन्धमें भी निर्दिष्ट की गयी है। विशष इतना है कि यहाँ ओघकी अपेक्षा महास्कन्धको द्रव्य–उत्कृष्ट, लोकाकाशको कर्मक्षेत्र-उत्कृष्ट, आकाशद्रव्यको नोकर्मक्षेत्र-उत्कृष्ट अनन्त लोकोंको काल–उत्कृष्ट और सर्वोत्कृष्ट वर्णादिको भाव-उत्कृष्ट कहा गया है।

आगे इस अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट जघन्य और अजघन्य वेदनायें किन किन जीवोंके कौन कौनसी अवस्थाओंमें होती हैं, इस प्रकार इन वेदनाओंके स्वामियोंकी विस्तारसे प्ररूपणा की गयी है। उदाहरणस्वरूप क्षेत्रकी अपेक्षा ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट वेदनाके स्वामीकी प्ररूपणा करते हुए बतलाया गया है कि एक हजार योजन प्रमाण आयत जो महामत्स्य स्वयम्भूरमण समुद्रके बाह्य तटपर स्थित है, वहां वेदना-समुद्घातको प्राप्त होकर जो तनुवातवलयसे संलग्न है तथा तथा जो मारणान्तिकसमुद्घातको करते हुए तीन विग्रहकाण्डकोंको करके अनन्तर समयमें नीचे सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न होनेवाला है उसके ज्ञानावरण कर्मकी क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट वेदना होती है। इस उत्कृष्ट वेदनासे भिन्न ज्ञानावरणकी क्षेत्रकी अपेक्षा अनुत्कृष्ट वेदना है। इसी प्रकारसे दर्शनावरण आदि शेष कर्मोंकी उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट वेदनाओंकी प्ररूपणा की गयी है। वेदनीय कर्मकी क्षेत्रकी अपेक्षा उत्कृष्ट वेदना लोकपूरण केवलिसमुद्घातको प्राप्त हुए केवलीके कही गयी है।

ज्ञानावरणकी क्षेत्रतः जघन्य वेदना ऐसे सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवके बतलायी है जो ऋजुगतिसे उत्पन्न होकर तद्भवस्थ होनेके तृतीय समयमें वर्तमान व तृतीय समयवर्ती आहारक है, जघन्य योगवाला है, तथा सर्वजघन्य अवगाहनासे युक्त है। इस जघन्य क्षेत्रवेदनासे भिन्न अजघन्य क्षेत्रवेदना कही गयी है। इसी प्रकारसे शेष कर्मोंकी भी क्षेत्रकी अपेक्षा जघन्य व अजघन्य वेदनाकी यहाँ प्ररूपणा की गयी है।

(३) अल्पबहुत्व– अनुयोगद्वारमें आठों कर्मोंकी उक्त वेदनाओंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा जघन्यपदविषयक, उत्कृष्टपदविषयक व जघन्य-उत्कृष्टपदविषयक, इन अनुयोगद्वारोंके द्वारा की गयी है। प्रसंग पाकर यहाँ (सूत्र ३०–९९ में) मूलग्रन्थकर्ताने सब जीवोंमे अवगाहना-दण्डककी भी प्ररूपणा कर दी है।

६ वेदनाकालविधान

इस अनुयोगद्वारमें पहिले नामकाल, स्थापनाकाल, द्रव्यकाल, समाचारकाल, अद्धाकाल, प्रमाणकाल और भावकाल, इस प्रकारके ७ भेदोंका निर्देश कर इनके और भी उत्तरभेदोंको बतलाते हुए तद्व्यतिरिक्त नोआगमद्रव्यकालके प्रधान और अप्रधान रूपसे २ भेद बतलाये हैं। इनमें जो काल शेष पांच द्रव्योंके परिणमनमें हेतुभूत है वह प्रधानकाल कहा गया है। यह

प्रधानकाल कालाणु स्वरूप होकर संख्यामें लोकाकाशप्रदेशोंके बराबर, रत्नराशिके समान प्रदेशप्रचयसे रहित, अमूर्त एवं अनादि-निधन है। अप्रधानकाल सचित्त, अचित्त और मिश्रके भेदसे तीन प्रकारका बतलाया है। इनमें दंशकाल (डाँसोंका समय) व मशककाल (मच्छरोंका समय) आदिको सचित्तकाल, धूलिकाल, कर्दमकाल, वर्षाकाल, शीतकाल व उष्णकाल आदिको अचित्तकाल, तथा सदंश शीतकाल आदिको मिश्रकालसे नामांकित किया गया है।

समाचारकाल लौकिक और लोकोत्तरके भेदसे दो प्रकार है। वन्दनाकाल, नियमकाल, स्वाध्यायकाल व ध्यानकाल आदिरूप लोकोत्तर समाचारकाल तथा कर्षणकाल (खेत जोतनेका समय) लुननकाल व वपनकाल (बोनेका समय) आदि रूप लौकिक समाचारकाल कहा जाता है। वर्तमान, अतीत व अनागत रूप काल अद्धाकाल तथा पल्योपम व सागरोपम आदि रूप काल प्रमाणकाल नामसे प्रसिद्ध है।

वेदनाद्रव्यविधान और क्षेत्रविधानके समान इस अनुयोगद्वारमें भी पदमीमांसा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ये ही तीन अनुयोगद्वार हैं।

(१) **पदमीमांसा** अनुयोगद्वारमें ज्ञानावरणादि कर्मोंकी वेदनाओंके उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट आदि उन्हीं १३ पदोंकी परूपणा कालकी अपेक्षा ठीक उसी प्रकारसे की गयी है जैसे कि द्रव्यविधानमें द्रव्यकी अपेक्षासे और क्षेत्रविधानमें क्षेत्रकी अपेक्षासे वह की गयी है। यहाँ उससे कोई उल्लेखनीय विशेषता नहीं है।

२) **स्वामित्व**- पिछले उन दोनों अनुयोगद्वारोंके समान यहाँ भी इस अनुयोगद्वारको उत्कृष्ट पदविषयक और अनुत्कृष्ट पदविषयक इन्हीं दो भेदोंमें विभक्त किया गया है। प्रकरण-वश यहाँभी प्रारम्भमें क्षेत्रके विधानके समान जघन्य और उत्कृष्टके विषयमें नामादिरूप निक्षेप-विधिकी योजना की गयी है। तत्पश्चात् ज्ञानावरणादि कर्मोंसम्बन्धी कालकी अपेक्षा होनेवाली उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट एव जघन्य-अजघन्य वेदनाओंके स्वामियोंकी प्ररूपणा की गयी है। उदाहरणार्थ, ज्ञानावरणकी उत्कृष्ट वेदनाके स्वामीका कथन करते हुए यह बतलाया है कि जो संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि जीव सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो चुका है, साकार उपयोगसे युक्त होकर श्रुतोपयोगसे सहित है, जागृत है, तथा उत्कृष्ट स्थितिबन्धके योग्य संक्लेश-स्थानोंसे अथवा कुछ मध्यम जातिके संक्लेश परिणामोंसे सहित है, उसके ज्ञानावरण कर्मकी कालकी उत्कृष्ट वेदना होती है। उपर्युक्त विशेषताओंसे संयुक्त जीव कर्मभूमिज (१५ कर्म-भूमियोंमें उत्पन्न) ही होना चाहिये, भोगभूमिज नहीं; कारण कि भोगभूमियोंमें उत्पन्न जीवोंके उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त वह चाहे अकर्मभूमिज (देव-नारकी) हो, चाहे कर्मभूमिप्रतिभागज (स्वयप्रभ पर्वतके बाह्य भागमें उत्पन्न) हो, इसकी कोई विशेषता यहाँ अभीष्ट नहीं है। इसी प्रकार वह संख्यातवर्षायुष्क (अढाई द्वीप-समुद्रों तथा कर्मभुमि प्रति-भागमें उत्पन्न) और असंख्यातवर्षायुष्क (देव-नारकी) इनमेंसे कोई भी हो सकता है। वह देव होना

चाहिये, मनुष्य होना चाहिये, तिर्यंच होना चाहिये अथवा नारकी होना चाहिये, इस प्रकारकी गतिजन्य विशेषताके साथ ही यहाँ वेदजनित विशेषताकी भी कोई अपेक्षा नहीं की गयी है। वह जलचर भी हो सकता हैं, स्थलचर भी हो सकता है, और नभचर भी हो सकता है, इसकी भी विशेषता यहाँ नहीं ग्रहण की गयी ।

इस उत्कृष्ट वेदनासे भिन्न वेदना अनुत्कृष्ट बतलायी गई है। इसी प्रकारसे यथासम्भव शेष कर्मोंकी कभी कालकी अपेक्षा उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट वेदनाओंकी विशदतासे प्ररूपणा की गयी है। आयु कर्मकी कालतः उत्कृष्ट वेदनाका निरूपण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि उत्कृष्ट देवायुके बन्धक मनुष्य सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, किन्तु उत्कृष्ट नारकायुके बन्धक मनुष्य पर्याप्त मिथ्यादृष्टिके साथ संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंच मिथ्यादृष्टि भी होते हैं। देवोंकी उत्कृष्ट आयुका वन्ध १५ कर्मभूमियोंमें ही होता है, कर्मभूमिप्रतिभाग और भोगभूमियोंमें उत्पन्न जीवोंके उसका बन्ध सम्भव नहीं है। उत्कृष्ट नारकायुका बन्ध १५ कर्मभूमियोंके साथ कर्म-भूमिप्रतिभागमें भी उत्पन्न जीवोंके होता है, भोगभूमियोंमें उसका बन्ध नहीं होता। इस उत्कृष्ट देवायु और नारकायुके बन्धक संख्यात वर्षकी आयुवाले मनुष्य व तिर्यंच उसके बन्धक नहीं होते। तीनों वेदोंमेंसे किसी भी वेदके साथ उत्कृष्ट आयुका बन्ध हो सकता है, उसका किसी वेदविशेषके साथ विरोध सम्भव नहीं है, यह जो मूल ग्रन्थकारद्वारा सामान्य कथन किया गया है उसका स्पष्टीकरण करते हुए श्री वीरसेन स्वामीने कहा है कि वेदसे अभिप्राय यहाँ भाववेदका रहा है। कारण कि अन्यथा द्रव्य स्त्रीवेदसे भी उत्कृष्ट नारकायुका बन्ध हो सकता है, किन्तु वह "आ पंचमी त्ति सिहा इत्थीओ जंति छट्ठिपुढवि त्ति" इस सूत्र (मूलाचार १२–११३) के विरुद्ध होनेसे सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त द्रव्यस्त्रीवेदके साथ उत्कृष्ट देवायुका भी बन्ध संभव नही है, क्योंकि, उसका बन्ध निग्रन्थ लिंगके साथ ही होता है, परन्तु द्रव्यस्त्रियोंके वस्त्रादि त्यागरूप भावनिर्ग्रन्थता सम्भव नहीं है।

कालकी अपेक्षा सब कर्मोंकी जघन्य वेदनाकी प्ररूपणा करते हुए ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्मकी यह वेदना छद्मस्थ अवस्थाके अन्तिम समयको प्राप्त जीवके (क्षीण-कषायके अन्तिम समयमें) बतलायी गयी है। वेदना, आयु, नाम व गोत्रकी कालतः जघन्य वेदना अयोगकेवलीके अन्तिम समयमें होती है। मोहनीय कर्मकी उक्त वेदना सूक्ष्मसाम्परायके अन्तिम समयमें होती है। अपनी अपनी जघन्य वेदनासे भिन्न सब कर्मोंकी कालतः अजघन्य वेदना कही गयी हैं।

अल्पबहुत्व– अनुयोगद्वारमें क्रमशः जघन्य पद, उत्कृष्ट पद और जघन्य–उत्कृष्ट पदकी अपेक्षा आठों कर्मोंकी कालवेदनाके अल्पवहुत्वकी प्ररूपणा की गयी है। इस प्रकार इन ३ अनुयोगद्वारोंके समाप्त हो जानेपर प्रस्तुत वेदनाकालविधान अनुयोगद्वार समाप्त हो जाता है। आगे चलकर उसकी प्रथम चूलिका प्रारम्भ होती है।

चूलिका १

इस चूलिकामें निम्न ४ अनुयोगद्वार हैं– स्थितिबन्धस्थानप्ररूपणा, निषेकप्ररूपणा आबाधाकाण्डकप्ररूपणा और अल्पबहुत्व।

(१) **स्थितिबन्धस्थानप्ररूपणामें** चौदह जीवसमासोंके आश्रयसे स्थितिबन्धस्थानोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गयी है। अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिमेंसे जघन्य स्थितिको कम करके एक अंकके मिला देनेपर जो प्राप्त हो उतने स्थितिस्थान होते हैं। इस अल्पबहुत्वको देशामर्शक सूचित कर श्री वीरसेन स्वामीने यहाँ अल्पबहुत्वके अव्वोगाढअल्पबहुत्व और मूलप्रकृतिअल्पबहुत्व ये दो भेद बतलाकर स्वस्थान-परस्थानके भेदसे विस्तारपूर्वक प्ररूपणा की है। अव्वोगाढअल्पबहुत्वमें कर्मविशेषकी अपेक्षा न कर सामान्यतया जीवसमासोंके आधारसे जघन्य व उत्कृष्ट स्थितिबन्ध, स्थितिबन्धस्थान और स्थितिबन्धस्थानविशेषका अल्पबहुत्व बतलाया गया है। परन्तु मूलप्रकृतिअल्पबहुत्वमें उन्हीं जीवसमासोंके आधारसे ज्ञानावरणादि कर्मोंकी अपेक्षा कर उपर्युक्त जघन्य उत्कृष्ट स्थितिबन्धादिके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गयी है।

आगे जाकर "बध्यते इति बन्धः, स्थितिश्चासौ बन्धश्च स्थितिबन्धः, तस्य स्थानं विशेष-स्थितिबन्धस्थानम्, अथवा बन्धनं बन्धः, स्थितेर्बन्धः, स्थितिर्बन्धः, सोऽस्मिन् तिष्ठतीति स्थिति बन्धस्थानम्" इन दो निरुक्तियोंके अनुसार स्थितिबन्धस्थानका अर्थ आबाधास्थान करके पूर्वोक्त पद्धतिके ही अनुसार अव्वोगाढअल्पबहुत्वमें स्वस्थान-परस्थान स्वरूपसे जघन्य व उत्कृष्ट आबाधा, आबाधास्थान और आबाधास्थानविशेषके अल्पबहुत्वकी सामान्यतया तथा मूल-प्रकृति अल्पबहुत्वमें इन्हींके अल्पबहुत्वकी कर्मविशषके आधारसे प्ररूपणा की गयी है। तत्पश्चात् जघन्य व उत्कृष्ट आबाधा, आबाधास्थान और आबाधाविशेष, इन सबके अल्प-बहुत्वकी पूर्वोक्त पद्धतिके ही अनुसार सम्मिलित रूपमें एक साथ भी की गयी है।

तत्पश्चात् "स्थितयो बध्यन्ते एभिरिति स्थितिबन्धः, तेषां स्थानानि अवस्थाविशेषः स्थितिबन्धस्थानानि" इस निरुक्तिके अनुसार स्थितिबन्धस्थानपदसे स्थितिबन्धके कारणभूत संक्लेश व विशुद्धि रूप परिणामोंकी व्याख्या प्ररूपणा, प्रमाण व अल्पबहुत्व इन ३ अनुयोग-द्वारोंसे की गयी है। संक्लेश विशुद्धिस्थानोंका अल्पबहुत्व स्वयं मूलग्रन्थकर्ता भट्टारक भूतबलिके द्वारा चौदह जीवसमासोंके आधारसे किया गया है। तत्पश्चात् स्थितिबन्धकी जघन्य व उत्कृष्ट आदि अवस्थाविशेषोंके अल्पबहुत्वका भी वर्णन मूलसूत्रकारने स्वयं ही किया है*।

(२) **निषेकप्ररूपणा**– संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यादृष्टि पर्याप्त आदि विविध जीव ज्ञानावर-णादि कर्मोंका आबाधाकालको छोडकर उत्कृष्ट स्थितिके अन्तिम समयपर्यन्त प्रथमादिक समयोंमें किस प्रमाणसे द्रव्य देकर निषेकरचना करते हैं, इसकी प्ररूपणा इस अधिकारमें प्ररूपणा, प्रमाण श्रेणि, अवहार, भागाभाग और अल्पबहुत्व, इन ६ अनुयोगद्वारोंके द्वारा विस्तारसे की गयी हैं।

* यह अल्पबहुत्व श्वेताम्बर कर्मप्रकृति ग्रन्थकी आचार्य मलयगिरि विरचित संस्कृत टीकामें भी यत् किंचित् भेदके साथ प्रायः ज्योंका त्यों पाया जाता है (देखिये कर्मप्रकृति गाथा १, ८०–८१ की टीका)। इसके अतिरिक्त यहाँ अन्य भी कुछ प्रकरण अनूदित जैसे उपलब्ध होते हैं।

(३) **आबाधाकाण्डकप्ररूपणा**में यह बतलाया गया है कि पंचेन्द्रिय संज्ञी आदि जीव आयुकर्मको छोड़कर शेष ७ कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे आबाधाके एक एक समयमें पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्र नीचे आकर एक आबाधाकाण्डकको करते हैं। उदाहरणार्थ विवक्षित जीव आबाधाके अन्तिम समयमें ज्ञानावरणादिकी उत्कृष्ट स्थितिको भी बांधता है, उससे एक समय कम स्थितिको बांधता है, दो समय कम स्थितिको भी बांधता है, तीन समय कम स्थितिको भी बांधता है इस क्रमसे जाकर उक्त समयमें ही पल्योपमके असंख्यातवें भाग मात्रसे हीन तक उत्कृष्ट स्थितिको बांधता है। इस प्रकार आबाधाके अन्तिम समयमें जितनी भी स्थितियाँ बन्धके योग्य हैं उन सबकी एक आबाधाकाण्डक संज्ञा निर्दिष्ट की गयी है। इसी क्रमसे आबाधाके द्विचरमादि समयोंके विवक्षित द्वितीयादिक आबाधाकाण्डकोंको भी समझना चाहिये। यह क्रम जघन्य स्थिति प्राप्त होने तक चालू रहता है। यहाँ श्री वीरसेन स्वामीने चौदह जीवसमासोंमें आबाधास्थानों और आबाधाकाण्डकशलाकाओंके प्रमाणकी भी प्ररूपणा की है।

यहाँ आयु कर्मके आबाधाकाण्डकोंकी प्ररूपणा न करनेका कारण यह है कि अमुक आबाधामें आयुकी अमुक स्थिति बँधती है, ऐसा कोई नियम अन्य कर्मोंके समान आयुकर्मके विषयमें सम्भव नहीं है। कारण कि पूर्वकोटिके त्रिभागको आबाधा करके उसमें तेतीस सागरोपम प्रमाण (उत्कृष्ट) आयु बँधती है, उससे एक समय कम भी बँधती है, दो समय कम भी बँधती है, तीन समय कम भी बँधती है, यहाँ तक कि इसी आबाधामें क्षुद्रभवग्रहण मात्र तक आयुस्थिति बँधती है। यही कारण है कि यहाँ आयुके आबाधाकाण्डकोंकी प्ररूपणा नहीं की गयी।

(४) **अल्पबहुत्व अनुयोगद्वार**में मूलसूत्रकार द्वारा चौदह जीवसमासोंमें ज्ञानावरणादि ७ कर्मों तथा आयु कर्मकी जघन्य व उत्कृष्ट आबाधा, आबाधास्थान, आबाधाकाण्डक, नानाप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर, एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तर, एक आबाधाकाण्डक, जघन्य व उत्कृष्ट स्थितिबन्ध तथा स्थितिबन्धस्थान, इन सबके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा विशद रूपसे की गयी है*। आगे चलकर यहाँ श्री वीरसेन स्वामीने इस अल्पबहुत्वके द्वारा सूचित स्वस्थान व परस्थान अल्पबहुत्वोंकी भी प्ररूपणा बहुत विस्तारसे की है।

चूलिका २

इस चूलिकाके अन्तर्गत स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंकी प्ररूपणामें जीवसमुदाहार, प्रकृतिसमुदाहार और स्थितिसमुदाहार ये ३ अनुयोगद्वार निर्दिष्ट किये गये हैं।

(१) **जीवसमुदाहार**में यह बतलाया है कि जो जीव ज्ञानावरणादि रूप ध्रुवप्रकृतियोंके बन्धक हैं वे दो प्रकार होते हैं---सातबन्धक और असातबन्धक। इसका कारण यह है कि

---

* तुलनाके लिये देखिये कर्मप्रकृति १-८६ गाथाकी आचार्य मलयगिरिविरचित संस्कृत टीका।

साता व असाता वेदनीयके बन्धके विना उक्त ज्ञानावरणादि प्रकृतियोंका बन्ध सम्भव नहीं है। इनमें जो सातबन्धक हैं वे तीन प्रकार हैं-चतुःस्थानबन्धक, त्रिस्थानबन्धक और द्विस्थानबन्धक। असातबन्धक भी तीन प्रकार ही हैं- द्विस्थानबन्धक, त्रिस्थानबन्धक और चतुःस्थानबन्धक। इनमें साताके चतु स्थानबन्धक सर्वविशुद्ध (अतिशय मंदकषायी), उनसे उसीके त्रिस्थानबन्धक संक्लिष्टतर होते हैं। असाताके द्विस्थानबन्धक सर्वविशुद्ध, इनसे त्रिस्थानबन्धक संक्लिष्टतर, और इनसे भी उसके चतुःस्थावबन्धक संक्लिष्टतर, होते हैं। साताके चतुःस्थानबन्धक जीव उक्त ज्ञानावरणादि प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिको, त्रिस्थानबन्धक अजघन्य अनुत्कृष्ट स्थितिको तथा द्विस्थानबन्धक उत्कृष्ट स्थितिको बाँधते हे। असाताके द्विस्थानबन्धक उपर्युक्त प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिको, त्रिस्थानबन्धक अजघन्य-अनुत्कृष्ठ स्थितिको, तथा चतुःस्थानबन्धक उक्त प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिके साथ ही आसाताकी भी उत्कृष्ट स्थितिको बांधते है। तत्पश्चात् साता व असाताके चतुःस्थानबन्धक व द्विस्थानबन्धक आदि जीवोंमें ज्ञानावरणकी जघन्य आदि स्थितियोंको बाँधनेवाले जीव कितने हैं, तथा ज्ञानोपयोग व दर्शनोपयोगसे बंधनेवाली स्थितियाँ कौन कौनसी है, इत्यादि बतलाकर छह यवोंके अधस्तन व उपरिम भागोंके अल्पवहुत्वकी प्ररूपणा की गयी है।

(३) **प्रकृतिसमुदाहारमें** प्रमाणानुगम और अल्पबहुत्व ये दो अनुयोगद्वार है। इनमें प्रमाणानुगमके द्वारा ज्ञानावरणादि कर्मोंकी स्थितिके बन्धके कारणभूत स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंके प्रमाणका प्ररूपणा तथा अल्पबहुत्वके द्वारा उक्त आठों कर्मोंके स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गयी है।

(३) **स्थितिसमुदाहारमें** प्रगणना, अनुत्कृष्टि और तीव्र-मंदता ये तीन अनुयोगद्वार है। इनमें प्रगणनाके द्वारा ज्ञानावरणादि आठ कर्मोंकी जघन्य स्थितिसे लेकर उत्कृष्ट स्थितिपर्यन्त पाये जानेवाले स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंकी संख्या और उनके अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की गयी है। अनुकृष्टिमें उपर्युक्त जघन्य आदि स्थितियोंमें इन्ही स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंकी समानता व असमानताका विचार किया गया है। तीव्र-मंदता अनुयोगद्वारमें जघन्य स्थिति-आदिके आधारसे स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानोंके अनुभागकी तीव्रता व मंदताका विवेचन किया गया है। इस प्रकार द्वितीय चूलिकाके समाप्त हो जानेपर प्रस्तुत वेदनाकालविधान अनुयोगद्वार समाप्त होता है।